



Review Article

विविध विमर्श के सन्दर्भ में हिन्दी साहित्य का अस्तित्व

डॉ. सुजाता मगदुम

प्राचार्या तथा हिन्दी सह-प्राध्यापिका, सरकारी पदवी महाविद्यालय, सदलगा, कर्नाटक, भारत

Corresponding Author: * डॉ. सुजाता मगदुम

DOI: <https://doi.org/10.5281/zenodo.23085952>

सारांश

प्रस्तुत आलेख आधुनिक काल, विशेषतः 2000 ई. के पश्चात हिन्दी साहित्य में उभरे विविध विमर्शों का विश्लेषण करता है। तकनीकी विकास और मीडिया की प्रगति के कारण साहित्य के पाठक-वर्ग में आई कमी तथा अति बौद्धिकता के कारण उत्पन्न पाठकीय अरुचि की चर्चा करते हुए लेखिका यह प्रतिपादित करती हैं कि साहित्य का स्वरूप सदैव समाज के अनुरूप परिवर्तनशील रहा है। 21वीं सदी को विमर्शों की सदी बताते हुए आलेख में स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, किन्नर-विमर्श तथा वृद्ध-विमर्श का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। स्त्री-विमर्श के अंतर्गत पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरुद्ध नारी-अस्मिता व स्वतंत्रता के संघर्ष को प्रतिनिधि उपन्यासों के उदाहरण सहित दर्शाया गया है। दलित-विमर्श में सदियों के शोषण के विरुद्ध दलित साहित्यकारों द्वारा उठाई गई स्वत्व-चेतना की आवाज़ को रेखांकित किया गया है। किन्नर-विमर्श के अंतर्गत तृतीय लिंग समुदाय की पीड़ा, तिरस्कार एवं उन्हें मुख्यधारा में लाने के प्रयासों का चित्रण करनेवाली रचनाओं की चर्चा की गई है। वृद्ध-विमर्श के दो आयामों—परंपरागत आदर्श मूल्यों तथा पितृसत्ता के विरुद्ध युवा-चेतना—को पौराणिक एवं आधुनिक कथा-साहित्य के उदाहरणों से स्पष्ट किया गया है। निष्कर्षतः आलेख यह स्थापित करता है कि ये विमर्श युगीन सामाजिक अन्याय व शोषण के विरुद्ध उपजे साहित्यिक प्रत्युत्तर हैं, जो साहित्य और समाज के बीच सार्थक संवाद स्थापित करते हैं।

Manuscript Information

- ISSN No: 2583-7397
- Received: 13-09-2024
- Accepted: 22-10-2024
- Published: 29-10-2024
- IJCRM:3(5) 2024: 323-325
- ©2024(All Rights Reserved)
- Plagiarism Checked: Yes
- Peer Review Process: Yes

How to Cite this Article

मगदुम सु. विविध विमर्श के सन्दर्भ में हिन्दी साहित्य का अस्तित्व. Int J Contemp Res Multidiscip. 2024(3(5)):323-325.

Access this Article Online



www.multiarticlesjournal.com

मुख्य शब्द: साहित्यिक विमर्श, स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, किन्नर-विमर्श, वृद्ध-विमर्श, नारी अस्मिता, पितृसत्ता, तृतीय लिंग, सामाजिक शोषण, समकालीन हिन्दी साहित्य

प्रस्तावना

आधुनिक काल में या यूँ कहें कि 2000 ई के बाद साहित्य के विविध विमर्श ने साहित्य-निर्माण के लिए नयी दिशा तो दिखायी है साथ ही साहित्य अत्यंत सीमित दायरे में सिमटता तथा अपने वाचक वर्ग से दूर होता नज़र आ रहा है। तकनीकी विकास ने नये उपकरण संसार के सामने रखे, जैसे टीवी, मोबाईल, लैपटॉप आदि, जिसका सीधा प्रभाव साहित्य पर यह पड़ा कि उसका वाचक वर्ग संख्या में अत्यधिक कम होने लगा। दूसरी ओर मनोरंजन को दूर रखकर केवल अति बौद्धिकता, अति भावुकता के प्रदर्शन के कारण भी साहित्य जनमानस से दूर होता जा रहा है। साहित्य के आधुनिकतावाद, उत्तर आधुनिकता, संरचनावाद, उत्तर संरचनावाद जैसे भारी-भरकम शब्दों ने पाठक वर्ग के मन में साहित्य के प्रति अरुचि पैदा कर दी हो तो इसमें आश्चर्य करनेवाली बात नहीं है। साहित्य मनुष्य मन के अंतरतम भाव जगत की तीक्ष्ण संवेदनाओं की शाब्दिक अभिव्यक्ति है। उसका अस्तित्व शाश्वत और अखण्ड है।

मनुष्य कुल का अस्तित्व जब तक है तब तक साहित्य जीवित रहेगा - इसमें दो राय नहीं। किन्तु साहित्य का स्वरूप सदैव ही परिवर्तनशील रहा है। समाज में होनेवाले हर बदलाव का प्रभाव साहित्य पर पड़ता है, अतः साहित्य के स्वरूप, संरचना, भाषिक अभिव्यक्ति, सोच की दिशा - हर एक विषय में बदलाव सहज ही होने लगता है। साहित्य वह महा सागर है जिसका ऊपरी आकार तो शांत दिखायी देता है किन्तु जिसकी गहराई में निरन्तर गतिशीलता बनी रहती है। साहित्य की यह गतिशीलता ही उसके स्वरूप में परिवर्तन प्रस्तुत करनेवाली महान शक्ति है। आधुनिक काल में साहित्य में विविध विमर्श के कारण एक नया दौर शुरू हो गया। डा. मनीषकुमार के शब्दों में - "20वीं सदी विमर्शों की सदी रही है। इस सदी में समाज के सभी वंचित समूहों ने अपने हक, अधिकार और अपनी अस्मितागत पहचान के लिए निर्णायक लड़ाई छेड़ रखी है। यह लड़ाई किसी के विरुद्ध नहीं बल्कि अपने पक्ष में लड़ी जा रही है।" 1 कुछ हो, नयी सदी में स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, किन्नर-विमर्श, पर्यावरण-विमर्श, वृद्ध-विमर्श, वैश्वीकरण, बाजारवाद आदि ने साहित्य के लिए वैचारिकता तथा संरचना के नये मार्ग प्रशस्त किए हैं। आधुनिक युग में मीडिया की विस्मयकारी प्रगति ने साहित्य के सम्मुख नये सवाल और नयी चुनौतियाँ रखी हैं जिनका प्रत्युत्तर देना साहित्य के लिए अनिवार्य होता जा रहा है। साहित्य में चित्रित नये प्रतिमान, बिम्ब विधान ने साहित्य के स्वरूप में आमूल-चूल परिवर्तन ला दिया है।

आधुनिक काल में सर्वाधिक लोकप्रिय तथा चर्चित विषय स्त्री-विमर्श का है। स्त्री-विमर्श हिंदी साहित्य और सामाजिक चिंतन का वह आंदोलन है, जो पितृसत्तात्मक व्यवस्था, लैंगिक भेदभाव और शोषण के खिलाफ स्त्री अस्मिता, स्वतंत्रता और समानता के अधिकारों पर विचार करता है। इसका मूल उद्देश्य महिलाओं को 'पुरुष के पूरक' या 'अबला' के रूप में देखने के बजाय, उन्हें स्वतंत्र मानवीय पहचान दिलाना है। नारी की अस्मिता की रक्षा, उसके सर्वतोमुखी व्यक्तित्व का विकास, सामाजिक क्षेत्र में नारी के योगदान की स्वीकृति का आग्रह आदि इस स्त्री विमर्श चिंतनधारा का प्रमुख मंतव्य रहा है। समकालीन परिदृश्य में इस विचारधारा ने आन्दोलनात्मक रूप धारण किया, साथ ही साथ स्त्री के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक अधिकारों के लिए इसने मांग की। आज समाज में नारी की स्थिति में पर्याप्त अंतर आ गया है। 21 वीं सदी के प्रथम और द्वितीय दशक में

पुरुषवादी मानसिकता के विरोध में स्त्री-विमर्श की आवाज़ उभरने लगी थी। हिन्दी उपन्यासों में बड़ी तीव्रता से इसका चित्रण होने लगा था। मधु कंकरिया का 'खुले गगन के लाल सितारे', मैत्रेयी पुष्पा का 'इदन्नमम', उषा प्रियंवदा का 'रुकोगी नहीं राधिका', नमिता सिंह का 'लेडीज़क्लब', अलका सरावगी का 'कलि कथा वाया बायपास' आदि रचनाओं में नारी चेतना को नयी अभिव्यक्ति दी गयी है। 1990 के बाद महिला कहानीकार तथा उपन्यासकारों की रचनाओं में स्त्री जीवन के जिन मुद्दों को उठाया गया है उनमें समाज व परिवार में स्त्री की चिंतनीय दशा, स्त्री पर पुरुष का वर्चस्व, स्त्री शोषण, उसकी आर्थिक निर्भरता आदि।

आधुनिक काल में एक और सर्वाधिक लोकप्रिय तथा चर्चित विषय दलित विमर्श का है। दलित साहित्य दलितों की आपबीति का साहित्य है। यह वह साहित्य है जो उनका जिया हुआ और भोगा हुआ सत्य है। यह हजारों वर्षों से पीड़ित वर्ग रहा है। उसकी अनन्त यातनाओं और पीड़ाओं को आधुनिक युग में वाणी मिली, और यही दलित बना। स्वतंत्रता के पश्चात अम्बेडकर द्वारा निर्मित संविधान ने समान अवसर, उनके हितों का संरक्षण, निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा तथा अस्पृश्यता के संपूर्ण निवारण के मुद्दे ने इस वर्ग में वह जागृति ला दी है कि अब वे संगठित होकर अपने स्वत्व अधिकार को प्राप्त करने का तीव्र स्वर दलित साहित्य में उभरा है। समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक परिदृश्य में दलित विमर्श सब प्रकार के भेदभाव के विरुद्ध सचेत करनेवाला साहित्य है। हिन्दी साहित्य में नये ढंग का दलित विमर्श मराठी साहित्य के प्रभाव से हुआ है। पिछले दो-तीन दशकों में बड़ी तेजी से यह साहित्य लिखा जा रहा है। हिन्दी के प्रमुख दलित साहित्यकारों के नाम इस प्रकार हैं - ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल चौहान, जयप्रकाश कर्दम, डा. उमेशकुमार सिंह, कर्मनन्द आर्य, डा. राजकुमार आदि। दलितों की दुर्दशा पर बिहारीलाल हरित ने लिखा है -

एक रुपये में जमींदार के, सोलह आदमी भरती
रोज़ाना भूखे मरते, मुझे कहे बिना ना सरती
दादा का कर्जा पोते से नहीं उतरने पाया
तीन रुपये में जमींदार ने सत्तर साल कमाया 2

ओमप्रकाश वाल्मीकी के अनुसार दलितों द्वारा लिखा जानेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है। उनके मतानुसार दलित ही दलित की पीड़ा को बेहतर ढंग से समझ सकता है। उनके द्वारा लिखित 'जूठन' आत्मकथा दलित साहित्य की श्रेष्ठ रचना मानी गयी है।

दलित साहित्य तथा दलित विमर्श ने हिन्दी साहित्य का नया रूपान्तरण किया। साहित्य ने इसके कारण नयी गति प्राप्त की। सदियों से निर्लक्षित, अलक्षित एक वर्ग ने इस साहित्य द्वारा अपने अस्तित्व की महत्ता का अहसास दिलाया। दलित-विमर्श ने बखूबी इसका साथ निभाया।

आज विश्वभर में जहाँ मानवाधिकार की चर्चा ने जोर पकड़ा है वहीं दूसरी ओर नाम लेने के लिए लज्जित होनेवाले समाज में आज किन्नर या हिजड़े या थर्ड जेंडर की चर्चा भी जोरों पर है। भारत के सुप्रीम कोर्ट ने केन्द्र तथा सभी राज्य सरकारों को सभी ट्रांस पीपल को

कानूनी पहचान देने तथा इस हाशिए को मुख्य धारा में लेकर आने के प्रयास करने का आदेश दिया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में किन्नर समुदाय पर चर्चा तेज़ होती जा रही है। हिन्दी साहित्य में भी किन्नर विमर्श पर बहुत सारा साहित्य लिखा जा चुका है। प्रदीप सौरभ का 'तीसरीताली', महेन्द्र भीष्म का 'किन्नरकथा', निर्मला भुड़ारिया का 'गुलाममंडी', नीरजा माधव का 'यमदीप', चित्रा मृदुगल का 'पोस्टबाक्स नं २०३ - नालासोपारा', आदि उपन्यासों में किन्नरों की पीड़ा का यथार्थ चित्रण किया गया है। शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'बिन्दामहाराज' में तृतीय लिंग की समस्याओं पर तीव्र प्रकाश डाला गया है। इसमें उनके दुःख, दर्द, संताप, मोह, अंधविश्वास, विडम्बना आदि को उजागर किया गया है। गरिमा संजय दुबे की कहानी 'पत्रबा' में किन्नरों की दारुण स्थिति, अपमान का सामना के साथ-साथ मरने के बाद जूतों से पीटे जानेवाली भयावहता का चित्रण इस प्रकार किया है - "किन्नर की मौत पर उसकी लाश की जूतों से पिटाई की खबर पढ़ ही रही थी कि पता चला कि पत्रबा मर गया"।¹³ किन्नर विमर्श की दृष्टि से श्री कृष्णसैनी की 'हिजड़ा', पूनम पाठक की 'किन्नर' भी प्रमुख रचनायें हैं।

किन्नर विमर्श का स्वर साहित्य में अभी बुलन्द होना बाक़ी है, क्योंकि समाज की वैचारिकी में अभी इस वर्ग का स्वीकारा जाना बाक़ी है। किन्नर विमर्श पर लिखे गये साहित्य में उनकी यातनाओं, पीड़ाओं, मजबूरी, व्यथा, तिरस्कार आदि का प्रभावी चित्रण हुआ है। किन्नर विमर्श ने साहित्य के दायरे को और विस्तृत कर दिया है। उनके प्रति साहित्य में चित्रित सहानुभूति ने तृतीय लिंगवाले आन्दोलन का समर्थन अप्रत्यक्ष रूप से किया है। किन्नरों को समाज की प्रमुख धारा में लाने के सरकार के प्रयासों को इस साहित्य से कदाचित कोई प्रेरणा मिल जाए।

आधुनिक काल में साहित्य विमर्श का एक और पहलू वृद्ध-विमर्श का है। हिंदी साहित्य में वृद्ध विमर्श एक महत्वपूर्ण समकालीन विमर्श है। यह वृद्धों की सामाजिक उपेक्षा, पारिवारिक अलगाव, और अकेलेपन की पीड़ा को केंद्र में रखकर समाज व संस्कृति की नई व्याख्या करता है। इसका मुख्य उद्देश्य बुजुर्गों को 'बोझ' मानने वाली मानसिकता का विरोध कर उनके अनुभवों और अधिकारों की पैरवी करना है। सूक्ष्म निरीक्षण किया जाए तो यह विमर्श दो दिशाओं में बढ़ता नज़र आता है। एक दिशा वह जो परंपरा की ओर ले जाती है जिसमें पाप-पुण्य की अवधारणायें, माता-पिता का आदर, गुरुजनों का सम्मान, अतिथियों का मान, बड़ों के प्रति श्रद्धा आदि सांस्कृतिक मूल्य शामिल हैं। इस प्रकार के सांस्कृतिक मूल्यों की महत्ता की स्थापना करनेवाली रचनायें हैं - बेंच पर बूढ़े (मृदुला गर्ग), बाऊजी और बन्दर (सूर्यबाला), प्रेत कामना (मनीषा कुलश्रेष्ठ), मैं जिन्दा हूँ, झुर्रियों की पीड़ा (कृष्णाअग्निहोत्री), माँ (चन्द्रकान्त कक्कड़े), माँ का दर्द (सुधा गोयल), प्यासी रेत (निर्मला सिंह), बूढ़ी हड्डियाँ (शिवकुमार राजोरिया), पड़ताल (पंकज मिश्र), मेज़ कुर्सी, तख्ता टाट (हरी भटनागर), उलट बासी (कविता), सिकुड़ता हुआ बाप (राजेन्द्रभट्ट) आदि।

यों हमारा प्राचीन साहित्य, पुराणों की अनेक कथायें इस बात की पुष्टी करती हैं, जैसे - माँ-बाप की परिक्रमा करनेवाले गणेशजी की कथा, पितृ वचन परिपालक श्री राम की कथा, श्रवणकुमार की कथा, पुण्डरीक की कथा आदि।

वृद्ध-विमर्श का दूसरा पहलू वह है जिसमें वृद्ध पिता की सत्ता का विरोध करती युवा पीढ़ी चित्रित है। वृद्ध-विमर्श पुराणों में आनेवाली

नचिकेता की कहानी भी उसी युवा मन की है जो स्वतंत्र ढंग से सोचना चाहता है, बाप से बुजुर्गों से अलग मत रखने की क्षमता रखता है और प्रतिफल के रूप में दण्डित हो जाता है। नचिकेता पहला ऐसा पात्र या व्यक्ति है जो पितृ सत्ता तन्त्र से सीधे-सीधे टकराता है। हिन्दी साहित्य के कथा-सम्राट प्रेमचन्द की अनेक रचनाओं में इसी सत्ता-तन्त्र से टकरानेवाले अनेक पात्र हमें मिलते हैं, जैसे - कर्मभूमि का नायक अमरकांत, निर्मला उपन्यास का मंसाराम आदि।

निष्कर्षतः

21 वीं सदी में हिन्दी साहित्य में अनेक विमर्श उभरकर आये जिनमें स्त्री-विमर्श, आदिवासी-विमर्श, दलित-विमर्श आदि युगीन परिस्थितियों के कारण उपजा फल है। कहीं लिंग को लेकर, कहीं जाति को लेकर तो कहीं अवस्था को लेकर अन्याय, शोषण होता रहा है। इसके खिलाफ़ साहित्य ने सदैव अपनी आवाज़ विमर्श द्वारा उठाया है। विमर्श साहित्य और समाज के बीच संवाद की स्थिति पैदा करता है, अतः यह चिंतन योग्य है।

सन्दर्भ-सूची

1. मनीषकुमार डॉ. समकालीन अस्मितामूलक विमर्श. SWAYAM. Available from: onlinecourses.swayam2.ac.in
2. हरित बिहारीलाल। अछूतों का बेताज बादशाह।
3. दुबे गरिमा संजय। पत्रा बा। वाङ्मय। संपादक: एम. फ़िरोज़ अहमद। 2017 Jan-Mar.